श्रीश्रीगुरु-गौरांगौ जयतः

विश्व शान्ति के लिए धर्म-पालन की प्रयोजनीयता

श्रीश्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी

आज जिधर देखो उधर ही धर्म के नाम पर झगड़े हो रहे हैं। सभी अपने-अपने झण्डे ऊपर उठाकर आपस में मार-काट कर रहे हैं। सभी तथाकथित धर्मावलम्बी, अन्य उपासना पद्धति के अनुचरों का खून पीने के लिए उतावले हैं। भारत ही नहीं अपितु लगभग सारा विश्व आज इन तथाकथित धार्मिक झगड़ों की आग में झुलस रहा

आखिर क्यों ?

धर्म ही तमाम झगड़ों की जड़ तो नहीं?

यदि है तो कैसे?

और यदि नहीं, तो धर्म के नाम पर झगड़े क्यों?

इन तमाम सवालों के जवाब हमारे परम पूजनीय गुरुदेव नित्य लीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी ने अपने एक प्रवचन में दिये। आप एक

महीने तक चली चौरासी कोस श्रीव्रजमण्डल परिक्रमा की समाप्ति के बाद देहली पधारे हुए थे। पहाड़गंज, नई दिल्ली स्थित श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ में आयोजित श्री हरिभक्ति-सम्मेलन में 'विश्व शान्ति के लिए धर्म-पालन की प्रयोजनीयता' विषय पर आपने अपने विचार रखे।

आपने कहा कि—भारतवर्ष में यह विषय रखना जँचता नहीं है। साधारण विचार से 'विश्व शान्ति

के लिए धर्म-पालन करने की प्रयोजनीयता' का मतलब है कि क्या अधर्म की भी विश्व शांति के लिए जरूरत हो सकती है? अभी लोगों के अन्दर ऐसी भावना आ गई है कि धर्म से शांति नहीं होगी। शायद, इसलिए इस प्रकार का विषय रखा गया है। सोचिये यदि धर्म से शान्ति नहीं होगी तो क्या अधर्म से शान्ति होगी?

जिनका ज्ञान थोड़ा हैं, बहुत थोड़ा है—वे ही ऐसा बोलेंगे

कि अधर्म से शान्ति होगी। साधारण विचार से धर्म होता है -- सत्य, शौच, दया, क्षमा, शम-दम व अहिंसा ---- इत्यादि का पालन।

अब सत्य को लीजिये। सत्य अर्थात् सच बोलना। क्या झूठ बोलने से दुनियाँ में शान्ति आएगी? अब आप सोचिये कि धर्म से शान्ति आएगी या कि अधर्म से शान्ति आएगी? ज़रा सी भी जिनके अन्दर बुद्धि है, वे कभी नही कह सकते कि अधर्म से

शान्ति आएगी। जिनका दिमाग ख़राब हो गया है, वे ही कह सकते हैं की झूठ बोलने से शांति आएगी। इसके बाद है, शौच अर्थात् पवित्रता। मिट्टी या पानी से बाहर की पवित्रता व दम्भ-मान-स्पृहा का परित्याग करके अन्तर्मन की पवित्रता होती है। अब आप ही सोचिए कि पवित्रता से शान्ति आएगी या अपवित्रता से? इसके बाद है, दया। दया करना होता है धर्म। इसका उल्टा

होता हैं निष्ठुर होना। अभी कलियुग मे लोगों की ऐसी भावना हो गई हैं कि इस जमाने में दया से शान्ति नही आएगी। जो जितना क्रूर हो सकता है, निष्ठुर हो सकता है, नृशंस हो सकता है- हो जाए, वो अपने को उतना ही महान् समझता है। परंतु इससे न तो व्यक्ति को शान्ति मिलेगी और न ही इससे समाज में शान्ति होगी। क्षमा एक गुण हैं, एक धर्म है—जब हम क्षमा नहीं

करेंगे अथवा किसी के कसूर पर जब हम उसका प्रतिशोध लेने के लिए कोशिश करेंगे, तब शान्ति आएगी या क्षमा करने से शान्ति आएगी ?

शम-दम-अन्तरइन्द्रिय-बहिरेन्द्रिय को संयमित करना, मन को निग्रह करना। मन में जो आएगा, हम वो करेंगे-ऐसा करने से क्या दुनियाँ में शांति होगी? इससे तो दुनियाँ में अशांति का ही फैलाव होगा। थोड़ा

विचार करिए कि मन को संयम करने से व बाहरी इन्द्रियों का संयम करने से शान्ति आएगी या इसका उल्टा काम करने से शांति आएगी? अहिंसा भी एक धर्म है। इसका उल्टा होता है हिंसा। क्या हिंसा करने से दुनियाँ में शांति हो सकती है?

फिर एक तरफ की बात मैं कह रहा हूँ। जिन्होंने ये subject रखा है, उनके अन्दर धर्म कहने से हिन्दू धर्म, इस्लाम-धर्म

व ईसाई-धर्म इत्यादि की भावना हो सकती है। धर्म कहने से यह समझा जाता है कि religion is a system of faith & worship. यानि कि कोई विश्वास या उपासना करने के लिए एक खास किस्म की पद्धति—इसे ही RELIGION या धर्म

कहते हैं। परलौकिक परित्राण के लिए, परलौकिक उद्धार के लिए जो उपासना करते हैं या परलौकिक परित्राण के लिए जो

उपासना पद्धति ग्रहण करते हैं–उसे ही आम आदमी धर्म कहते हैं। किसी देश में या किसी जाति में पाप—पुण्य में जो विश्वास है, उसे भी ‘धर्म’ कहते है। अभी भी एक धर्म है "विश्वास"। दुनियाँ में विश्वास भी बहुत प्रकार के हैं। ‘ईश्वर’ में विश्वास करके पारलौकिक परित्राण प्राप्त के लिए, मंगल प्राप्ति के लिए जो व्यवस्था देते हैं–उनमें से एक इस्लाम धर्म भी है। इस्लाम

धर्म में भी ईश्वर में विश्वास करते हुए उपासना की पद्धति बताई गई है।

इसी प्रकार ईसाई धर्म है व आप लोगों का हिन्दू धर्म है। इसके अलावा बौद्ध–धर्म व जैन–धर्म हैं। बौद्ध व जैन ईश्वर मे विश्वास नहीं करते। वेद को नहीं मानते, लेकिन उसमें भी एक उपासना पद्धति है। सत्य, दया, शौच व अहिंसा इत्यादि उनके अन्दर भी है। दुनियाँ में ईश्वर

में विश्वास करने वाला कोई भी नहीं कहता है कि अधर्म करना उचित है। किसी धर्म शास्त्र में ऐसा नहीं लिखा है। लेकिन आजकल लोग धर्म के केवल बाहरी अनुष्ठान को ही देखते हैं। 'धर्म' होता है मनुष्य के अन्दर सद् भावना व सद्गुण करने की उपासना। सद्वस्तु भगवान् के बारे में आलोचना करने से हमारे अन्दर सद्गुण आ जायेंगे। इसलिए भगवान् में विश्वास करने

की पद्धति बतायी जाती है। जहाँ पर भगवान् में विश्वास नही हैं, जिन उपासना पद्धतियों में ईश्वर में विश्वास न करने की आज्ञा है—उन बौद्ध व जैनादि उपासना पद्धतियों में भी चरित्र संशोधन करने के लिए जो व्यवस्था है, उसमें भी नहीं कहा गया है कि हिंसा करो या झूठ बोलो इत्यादि।

कोई भी धर्म नहीं कहता कि हिंसा करो, कोई भी धर्म नहीं चाहता कि झूठ बोला जाए।

लेकिन धर्म की जो बाहरी आनुष्ठानिक क्रिया है, उसमें अलग अलग भाषा, अलग अलग देश (जगह) व वहाँ की अलग-अलग climatic conditions होने की वजह से कुछ फर्क है जैसे मुसलमान एक तरह से उपासना करते हैं, ईसाई एक और तरह से उपासना करते है व हिन्दूओं की ही एक उपासना विधि है, लेकिन किसी धर्म में भी अधर्म कि बात नहीं है। परंतु आज धर्म के असली

उद्देश्य— जीवों पर दया करना, हिंसा नहीं करना, सबसे प्रीति करना व झूठ नहीं बोलना इत्यादि को हम भूल गए हैं। धर्म के बाहरी अनुष्ठान को लेकर हम झगड़ा करते हैं। वास्तव में धर्म में झगड़ा नहीं है। परंतु धर्म के बाहरी अनुष्ठान को लेकर हम लोगों के अन्दर धर्मांधंता आ गई हैं, इसे ही Fanaticism कहते है। यदि हम जबरदस्ती किसी को दूसरे धर्म में convert करेंगे तो

इससे अशांति होती हैं।

मनुष्यों के अधिकार में फर्क है। एक-एक जगह के अधिकार में फर्क है। महापुरुषों ने मंगल के लिए ही यह सब किया है। लेकिन आज के मनुष्य मंगल की बात पर ध्यान न देकर, धर्मों के मूल उद्देश्य को न समझकर— धर्म की केवल अनुष्ठानिक (बाहरी) क्रियाओं मे फँसकर आपस मे झगड़ा करते हैं। अभी तो माहौल इतना गन्दा हो गया है

कि धर्म को राजनैतिक लोगों ने अपना हथियार बना लिया है। धर्म कभी भी हिंसा करने के लिए नही कहता। बच्चों को मारो, स्त्री को खत्म करो, जिस किसी मनुष्य की हत्या कर दो-यह धर्म नहीं है। परंतु धर्म के नाम पर ये सब पाप किए जा रहे हैं। राजनीति ने धर्म को अपना हथियार बना लिया है, इसलिए भी ये जबर-पाप (भयंकर पाप) हो रहे हैं, किन्तु असलियत में कोई

भी धर्म इस प्रकार की शिक्षा नही देता।

इस सम्बन्ध में श्रीचैतन्य महाप्रभु जी ने जो समाधान प्रदान किया है- वह यह है कि जब तक मनुष्यों को अपने स्वरूप का ज्ञान नहीं होगा, तब तक सद्धर्म दुनियाँ में नहीं आ सकता। जब मै समझूँगा कि मैं भारत का हूँ, मैं बंगाल का हूँ, पाकिस्तान का हूँ, पंजाब का हूँ व आसाम का हूँ, तो आपस में

झगडा होगा ही। श्रीचैतन्य महाप्रभु कहते हैं कि जब तक ये मिथ्या अभिमान रहेगा, कोई दुनियाँ में शांति नहीं ला सकता। आपस में झगड़ा होगा ही। श्रीचैतन्य महाप्रभु जी कहते हैं कि तुम भारत के नहीं हो, तुम तथाकथित हिन्दू नहीं हो, तुम क्रिश्चियन नहीं हो–परमेश्वर जो श्री कृष्ण हैं, तुम उनकी शक्ति के अंश हो। परमेश्वर एक है। वह सभी का मालिक है। तुम उसे

अपनी भाषा में God कह सकते हो, अल्लाह कह सकते हो–उसमें कोई आपत्ति नहीं है, कोई एतराज़ नहीं है। जो परमेश्वर हैं– उनकी शक्ति के अंश तमाम जीव हैं। अपने स्वरूप को समझने से ही मैं समझूँगा कि मैं तटस्था शक्ति का अंश हूँ। तमाम जीव भी भगवान् की तटस्थ शक्ति के अंश है। इसे ही सद्धर्म कहते हैं। सद्धर्म में ही अर्थात् अपने स्वरूप का ज्ञान होने से ही हमारी तमाम

चेष्टाएँ श्रीकृष्ण भगवान् को केन्द्र करके, उनकी प्रसन्नता के लिए होंगी। जब मैं आपको प्यार करता हूँ तो आपके शरीर के किसी भी हिस्से से हिंसा नहीं कर सकता। आपको प्यार करूँ और आपके हाथ को काट दूँ–ये कभी हो सकता है?

नहीं, जब मैं आपको प्यार करता हूँ तो आपको सब हिस्सों को प्यार करता हूँ– भगवान् तो पूर्ण हैं, उनके बाहर

तो कोई वस्तु नहीं है। (माइक की और इशारा करते हुए) यदि मैं कहूँ कि ये माईक भगवान् से बाहर है,तब तो वे अर्थात् भगवान् असीम नहीं रहे, ससीम हो गए। परन्तु भगवान् तो असीम हैं, सब वस्तुएँ उनके अंदर ही हैं-

तदतंगर्त तदकरोड़ीभूत तदधी।

इसलिए स्वयं भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु व तमाम ऋषि-मुनियों ने जीव मात्र को कहा है कि-तुम शरीर नहीं हो, तुम जीवत्मा हो।

भगवान् के नित्य दास हो। मैं भारत का हूँ, ये पाकिस्तान का है-ऐसे में पाकिस्तान का स्वार्थ उसका स्वार्थ होगा व भारत का स्वार्थ मेरा स्वार्थ होगा। मैं भारत के स्वार्थ के लिए कोशिश करूँगा, वो पाकिस्तान के स्वार्थ के लिए कोशिश करेगा।

स्वार्थ का केन्द्र अलग–अलग होने से झगड़ा तो स्वभाविक ही है। मैंने एक केन्द्र करके एक वृत्त अकंन (Circle

draw) किया। दूसरे व्यक्ति ने एक और केन्द्र से वृत्त अकंन करने पर crossing तो होगी ही। अभी भारत के अन्दर ही कितने स्वार्थ केन्द्र हो गये हैं। मैं बंगाल का हूँ, मैं पंजाब का हूँ, मैं बिहार का हूँ या आसाम का हूँ–स्वार्थ के जितने अलग–अलग केन्द्र होंगे, उतने ही अधिक संघर्ष की सम्भावना है और ये जो मैं और मेरे का मिथ्या अभिमान है, ये सब गलत है। मैं ये शरीर हूँ–ये मेरा मिथ्या

अभिमान है व शरीर के जितने भी परिचय हैं कि मैं ब्राह्मण हूँ, क्षत्रिय हूँ, वैश्य हूँ, या शूद्र हूँ अथवा मैं भारतवासी हूँ, पाकिस्तानवासी हूँ, अमेरिकावासी हूँ या यूरोपवासी हूँ–ये सब झूठे अभिमान हैं।

मैं कौन हूँ?

श्रीचैतन्य महापप्रभु जी कहते है-

जीवेर स्वरूप हय कृष्णेर नित्यदास,
कृष्णेर तटस्थ शक्ति भेदाभेद प्रकाश।

International Society for Krishna Consciousness (ISKCON) द्वारा सारी दुनियाँ मे यह प्रचार हो रहा है कि तुम अमेरिकन नहीं हो, तुम जापानी नहीं हो, या तुम रशियन नहीं हो ये तो तुम्हारा भौगोलिक (Geographical) परिचय है, वास्तव मे तुम श्रीकृष्ण की तटस्था शक्ति के अंश हो, श्रीकृष्ण के नित्य दास हो। इस लिए कृष्ण-भक्ति ही एकमात्र सद्धर्म है। ये कृष्ण भक्ति ही

आत्मा का धर्म है। आत्मा की त्रिगुणातीत वृत्ति अर्थात् नित्यवृत्ति कृष्ण भक्ति ही एकमात्र सद्धर्म है।

स वै पुंसां परो धर्मो यतो
भक्तिरधोक्षजे।
अहैतुक्यप्रतिहता ययात्मा सुप्रसीदति।।
(श्रीमद्भागवतम् 1-2-6)

"स वै पुंसां परो धर्मः" इसे कहते है 'श्रेष्ठ धर्म' अर्थात् अधोक्षज जो कृष्ण हैं, उनमें जो प्रीति है—उसे कहते है 'श्रेष्ठ र्धम'।

वह श्रेष्ठ धर्म अर्थात् अहैतुकी एवं अप्रतिहता कृष्ण-भक्ति जब सबके हृदय में प्रकाशित हो जाए व सब जीव यदि श्री कृष्ण को प्यार कर सके-तब ही नित्य शान्ति हो सकती है अन्यथा जँहा जायेगे वहीं अशांति होगी। सब जगह अशांति है यहां तक कि स्वर्ग मे भी शान्ति नही है। जैसे यहां पर हम देखते हैं कि जो बराबर के हैं उनसें स्वार्थ होता है तथा जो श्रेष्ठ है, उनसें हिंसा होती है-स्वर्ग

मे भी ऐसा ही है। यहाँ तक कि सत्य लोक मे भी ऐसा ही है। सारे ब्राह्मड मे ही ऐसा हैं। सब जगह ही अशांति है। जहाँ पर प्राकृत-अस्मिता है अर्थात् जहाँ पर भगवान् को भूल कर मायिक अभिमान है, वहाँ पर स्वार्थों का संघर्ष होगा ही। इसे सद्धर्म नही कहते। परन्तु हमारे सनातन धर्म में उनको उठाने के लिए क्रम-मार्ग अथवा वर्णाश्रम धर्म बताया गया है। वर्णाश्रम धर्म

अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शुद्र आदि वर्ण व सन्यासी, ब्रह्मचारी, गृहस्थ व वानप्रस्थादि आश्रम-नित्य धर्म नहीं है। लेकिन सनातन धर्म इसका लक्ष्य है। इनका लक्ष्य है धीरे-धीरे जीवों को यहां से उठा कर आत्म धर्म मे ले जाने का। जहाँ आत्म धर्म लक्ष्य नही होगा, सिर्फ वर्णाश्रम धर्म का अभिमान होगा, उससे मंगल नहीं होगा। वर्णाश्रम धर्म का प्रवर्तन ही

इसलिए किया गया है कि इनका पालन करते हुए धीरे-धीरे जीवों को सनातन धर्म में ले जाया जाए। सनातन धर्म का अभिप्राय आत्म धर्म से है, जिसके पालन से जीवों को कृष्ण भक्ति मिल सकती है।

परम शान्ति के लिए श्रीचैतन्य महाप्रभु जी ने समाधान प्रदान किया कि संसार का एकमात्र सद्धर्म कृष्ण भक्ति ही है, हरेक जीव का श्रीकृष्ण से

प्रीति सम्बन्ध है। जब हम कृष्ण से प्यार करेंगे तो उनके सम्बन्ध से सारी दुनियाँ के जीवों को प्यार कर सकते हैं। अहिंसा अपने आप हो जायेगी।

पूर्ण वस्तु भगवान् को प्रयोजन (अपनी ज़रूरत) समझने से झगड़ा नहीं होगा। जब हम अपने मिथ्या अभिमान में रहेंगे कि मैं ये शरीर हूँ, सिर्फ शरीर की ज़रूरत ही मेरी ज़रूरत

प्रीति सम्बन्ध है। जब हम कृष्ण से प्यार करेंगे तो उनके सम्बन्ध से सारी दुनियाँ के जीवों को प्यार कर सकते हैं। अहिंसा अपने आप हो जायेगी।

पूर्ण वस्तु भगवान् को प्रयोजन (अपनी ज़रूरत) समझने से झगड़ा नहीं होगा। जब हम अपने मिथ्या अभिमान में रहेंगे कि मैं ये शरीर हूँ, सिर्फ शरीर की ज़रूरत ही मेरी ज़रूरत तब समझना होगा कि शरीर की

ज़रूरतें तो दुनियाँ की वस्तुएँ हैं, ये तो Limited हैं, व दुःखदायी हैं। जब मनुष्यों को ये समझाया जाए कि तुम शरीर हो, शरीर की ज़रूरतें ही तुम्हारी ज़रूरते हैं, इनका प्रयोजन ही तुम्हारा प्रयोजन है–तब विषय तो Limited हैं, वे किसी को कम मिलेगे तो किसी को ज़्यादा, झगड़ा तो अवश्यभावी है ही। लेकिन जब सच्ची बात उन्हें समझायी जाए कि तुम आत्मा हो, अनात्मा

तुम्हारी ज़रूरत नहीं है, दुनिया की सारी अनात्मा सम्पत्ति (विषय-वस्तु) तुमको दे दी जाए तो भी तुम सुखी नही हो सकते हो। आत्मा ही आत्मा की जरुरत है। अनात्म वस्तु तो ससीम है जबकि परमात्मा भगवान् पूर्ण है। पूर्ण को अनन्त जीवों द्वारा प्राप्त कर लेने पर भी वह पूर्ण ही रहेगा, कभी कम नही होगा।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्
पूर्णमुदच्यते ।

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

सद्धर्म में, परधर्म में सबका ही स्वार्थ है। अतः विश्व शान्ति के लिए भी सद्धर्म, परधर्म की अथवा श्रेष्ठ धर्म की अर्थात् श्री कृष्ण-भक्ति धर्म की जरूरत है। भगवान् से अनन्त जीव आए, भगवान् के द्‌वारा ही अनन्त जी संरक्षित हैं और अन्त में भी इनकी गति भगवान् में ही है। अतः भगवान् के सुख से ही जीव

का सुख है। स्वतन्त्र रुप से जीव कभी भी सुखी नहीं हो सकते। स्वतंत्र रूप से समाज में देश में व विश्व में शान्ति नही हो सकती।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।